International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(3): 99-100

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(3): 99-100
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 21-03-2016
Accepted: 22-04-2016

डॉ. अमित शर्मा
संस्कृत विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

Correspondence
डॉ. अमित शर्मा
संस्कृत विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

विश्वशान्ति और वेद

डॉ. अमित शर्मा

आधुनिक युग विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। विकसित मानव–चेतना द्वारा प्रदत्त इस युग ने मानव–जीवन को अद्भुत वरदान प्रदान किये हैं। एक ओर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र कृषि, उद्योग, चिकित्सा तथा संचार के क्षेत्र में बहुत उन्नति प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर ऐसे आण्विक शस्त्रास्त्रों का अविष्कार हो रहा है, जिनके अंश मात्र प्रयोग से सम्पूर्ण चराचर का अस्तित्व संकटापन्न है। आंतकवाद, भुखमरी तथा प्रदूषण आदि की समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। मानव की भोगवादी, सुविधा परस्त तथा धनलिप्सा आदि प्रवृत्तियों के कारण मानवीय मूल्यों का क्षरण तथा सर्वत्र भ्रष्टाचार व्याप्त होता जा रहा है। जाति, धर्म, क्षेत्रीयता, संकीर्णता, द्वेष, राग, वैमनस्य, पापाचार, हिंसा, शत्रुता, आतंक, भौतिकवादिता आदि के कारण हम एक दूसरे के शत्रु बन गये हैं। इससे शारीरिक, मानसिक, आत्मिक अशान्ति तथा व्यक्तिगत, सामाजिक और वैश्विक अशान्ति की भयावह समस्या उत्पन्न हो गई है। आधुनिक युग में सामान्य रूप से 'विश्वशान्ति' का अर्थ विश्व में युद्ध का अभाव माना जाता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना भी वैश्विक शान्ति के उद्देश्य से ही की गई थी।

सृष्टि की आदिम रचना एवं आदिम साहित्य वेद विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व, विश्व कल्याण और अनेकत्व में एकत्व का भाव जागृत करते हैं। वेद **'कृण्वन्तो विश्वमार्य्यम्'**,[1] **'यत्र विश्वं भवत्येकनीड़म्'**[2] का प्रथम उद्घोष हैं। विश्व को सभ्य बनाना ही वेद का उद्देश्य है। वेद में निहित एवं निर्दिष्ट जीवन–पथ का अनुसरण कर सम्पूर्ण विश्व में शान्ति और सौमनस्य की प्रतिष्ठा की जा सकती है।

ऋग्वेद का **'संज्ञान–सूक्त'** विश्व–शान्ति के निमित्त संगठन, एकता, सद्भाव, सहयोग एवं एकत्वभाव का उपदेश देता है। ऋग्वेद का यह मन्त्र है–

'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते।।"[3]

हे मनुष्यो, तुम मिलकर रहो। एक साथ स्तोत्र पाठ करो। तुम सबका मन समान हो। जैसा देवता एक मत होकर हवियों का भाग ग्रहण करते हैं उसी प्रकार तुम भी स्व–स्व सम्पत्तियों का ग्रहण करो। अपर मन्त्र में कहा गया है–

"समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।"[4]

हे मनुष्यो, तुम्हारा संकल्प समान हो, तुम्हारे हृदय व अन्तः करण भी समान हों, क्योंकि तुम सबका संगठित होकर रहना ही श्रेयस्कार है।

वेदों में त्याग–प्रधान जीवन को महत्त्व दिया गया है, क्योंकि सम्पूर्ण विश्व में अशान्ति का मूल कारण भोगोन्मुख एवं आत्मकेन्द्रित जीवन शैली है। यदि सम्पूर्ण जगत् को ईश्वरमय मानकर व्यवहार किया जाये तो कोई विवाद नहीं होगा।

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम्।।"[5]

वेद मन्त्रों में मानव में परस्पर सौहार्द, मैत्री तथा सहाय्य की भावना स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है–

"मित्रास्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।"[6]

"सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु"।[7]

अथर्ववेद में मनुष्य के हृदय में एक–दूसरे के प्रति घृणा के स्थान पर प्रेम, द्वेष के स्थान पर मैत्री तथा ईर्ष्या के स्थान पर दया का भाव जागृत करने का उपक्रम किया गया है–

"सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाध्न्या।।"[8]

अर्थात् परस्पर विवाद करने वाले हे मनुष्यो, तुम लोगों को समान हृदय वाला समान मन वाला तथा द्वेष रहित बनाता हूँ। जैसे गाय अपने सद्यः उत्पन्न बछड़े से प्रेम करती है वैसे ही तुम लोग भी एक–दूसरे से प्रेम करो।

यजुर्वेद के अनुसार विश्वशान्ति एवं कल्याण हेतु आत्मवतभाव, समदृष्टि तथा विश्वबन्धुत्व का भाव परमावश्यक है–

"यस्तु सर्वाणि भूतान्यत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति।।
यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाद्विजानतः।
तत्रा को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः"।।[9]

अर्थात् जो व्यक्ति सब प्राणियों को परमात्मा में और परमात्मा को सब प्राणियों में देखता है वह किसी संशय को प्राप्त नहीं होता है। जो व्यक्ति सब प्राणियों में परमात्मा का दर्शन करता है वह किसी को छोटा क्यों समझेगा और किसी से घृणा क्यों करेगा? परमात्मा को सब पदार्थो में देखने वाले व्यक्ति के मन में ऊँच–नीच आदि भावनाएं नहीं रहती। वह किसी से द्वेष तथा तुच्छता आदि की भावनाएं नहीं रखता। दूसरे मन्त्र का भी यही आशय है कि जिस अवस्था विशेष में अभेदज्ञान से सम्पन्न पुरुष के लिए सभी चेतन और अचेतन भूत संघात आत्मा ही हो जाते हैं उस विशुद्ध आत्मा को देखने वाले साधक के लिए क्या मोह और क्या शोक रह जाता है ?

वेद **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की भावना से ओत–प्रोत हैं। देशभक्ति, देश–प्रेम और देश के लिए बलिदान होने की भावना का सर्वप्रथम प्रतिपादन वेदों में ही किया गया है। यह भावना विश्वशान्ति के लिए बहुत ही आवश्यक है। अथर्ववेद के अनुसार–

'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या'।[10]

अर्थात् पृथिवी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।

'वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम'।[11]

अर्थात् हम मातृभूमि के लिए बलिदान हों। यजुर्वेद में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में शान्ति की कल्पना की गई है। उसमें द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधियों, वनस्पतियों के साथ विश्वदेवो तथा ब्रह्म एवं सभी की शान्ति की बात कही गई है। सम्पूर्ण पर्यावरणीय उपादानों में शान्ति की प्रतिष्ठा होने से जन–जन में शान्ति सम्भव है–

ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः। शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।[12]

इस प्रकार स्पष्ट है कि वैदिक संहिताओं में सर्वत्र विश्वशान्ति की कल्पना की गई है। वेद की कामना है कि विश्व के सब मनुष्यों में सद्भावना, मैत्री भावना एवं विश्वबन्धुत्व का आलोक फैले और उनमें आपसी स्नेह सम्बन्ध सदृढ़ हो। वैदिक तत्त्व ज्ञान का विचार दर्शन न केवल आधुनिक परिप्रेक्ष्य एवं परिस्थितियों में ही प्रामाणिक, प्रासङ्गिक एवं उपयोगी है बल्कि इनकी उपादेयता एवं सार्थकता सार्वकालिक, सार्वदैशिक एवं सार्वभौतिक है। वैदिक संहिताओं ने संकीर्णता, संकुचिता, पक्षपात, घृणा, जातीयता, प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता आदि दुर्भावनाओं के लिए कोई अवकाश नहीं है। यदि वेदों का अनुसरण किया जाये, तो सर्वत्र प्रेम और सौहार्द का वातावरण स्थापित हो सकता है और विश्वशान्ति के इस महनीय माङ्गलिक उद्देश्य को प्राप्त करने में हम सक्षम और समर्थ हो सकते हैं।

संदर्भ

1. ऋग्वेद–10.65.11
2. वाजसनेयी संहिता– 32.8.
3. वही–10.191.2.
4. वही– 10.191.4.
5. यजुर्वेद–40.1
6. वही– 36.18
7. अथर्ववेद– 19.15.6.
8. वही– 3.30.1.
9. यजुर्वेद– 40.6–7
10. अथर्ववेद– 12.1.12.
11. वही– 12.1.32.
12. यजुर्वेद– 36.17.